Volume-II, No. 1, Feb -2015, pp. 1-7

आचार्य विनोबा भावे के शैक्षिक विचारों की वर्तमान सन्दर्भ में प्रासंगिकता

डॉ. सीमा रानी, ऐसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्षा, शिक्षा विभाग
डी. ए. के. कालिज, मुरादाबाद (उ.प्र.) भारत।
कमल सिंह शोधार्थी
मेवाड विश्वविद्यालय, गंगरार, चित्तौड़गढ़ (राजस्थान) भारत।

विनोबा जी के जीवन पर उनकी माता का बहुत प्रभाव पड़ा। खेल का अर्थ 'आनन्द' या 'मनोरंजन' रहता है। वह व्यायाम रूप 'कर्तव्य' नहीं बन पाता। यही बात सभी प्रकार की शिक्षाओं पर लागू करनी चाहिए। विचारों का प्रत्यक्ष जीवन से नाता छूट जाने से विचार निर्जीव हो जाते हैं और जीवन विचार–शून्य बन जाता है। मनुष्य में सत्यवृत्ति उत्पन्न करना शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है। विनोबा जी ने पाठ्यक्रम के स्रोतों को ऋग्वेद से लिया है। उन्होंनें सहज शिक्षण पर बल दिया। सहज रूप से जो सिखाया जाता है, वह स्थायी होता है। शिक्षक का काम पथं संशोधक का होता है। वह जीवन की राह दिखाता है, जीवन की राह बनाता है। विद्यार्थी स्वयं ही सीखता है। हमें उसमें ज्ञान की पिपासा उत्पन्न करनी है। अनुशासन का आरम्भ आचार्य से होता है। आचार्य अनुशासन में रहेंगे तो शिष्य भी रहेंगे। गरीब और अमीर दोनों का एक ही विद्यालय होना चाहिए। विनोबा का ब्रह्म विद्या मन्दिर का प्रयोग अधिक प्रासंगिक सिद्ध हुआ है। नारी सर्वोत्तम शिक्षिका है, उसके मुख से जो वाणी निकलती है, वह संस्कार पैदा करती है। तालीम का सारा आधार आत्मा का ज्ञान हो। इस प्रकार 'मातृहस्तेन भोजनम् और 'मातृमुखेन शिक्षणम्' होगा तो भारत की प्रभा एकदम फैलेगी और दुनिया पर उसका असर पड़ेगा।

बीसवीं सदी के इस महान् संत का जन्म,11 सितम्बर सन् 1895 को महाराष्ट्र के कुलावा जिले में बसे छोटे से गांव 'गगोदा' में हुआ था। आज इस महान तपस्वी संत की देन है कि इस गांव का नाम केवल भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में प्रसिद्ध हो गया है। उसका कारण केवल हमारे राष्ट्र सतं आचार्य विनोबा जी ही हैं। इनके पिता श्री नरहरि शम्भुराव, उस समय बड़ौदा राज्य में नौकरी करते थे। दादा श्री शम्भूनाथ जी, बहुत ही धार्मिक विचारों के ब्राह्मण थे, पूजा–पाठ, और धर्म ज्ञान के साथ–साथ वे प्रगतिवादी विचारधारा भी रखते थे। माँ रूकिमणी देवी का तो कहना ही क्या था, वे तो सदा ही अपने भजन–कीर्तन में खोयी रहतीं, घर के काम–काज के साथ–साथ वे हर समय प्रभु के भजन गाती रहतीं। अपने दादा के साथ–साथ विनोबा जी के जीवन पर उनकी माता का बहुत प्रभाव पड़ा है। उनकी माँ बहुत ही धार्मिक विचारों की स्त्री थीं–इनकी सबसे बड़ी देन आचार्य जी को दिया हुआ यह गुरू मंत्र है।''जो देता है, वह देव है, और जिसके हाथ से कुछ छुटता नहीं वह राक्षस है।''

शिक्षा का स्वरूप आचार्य विनोबा भावे ने अपनी विश्व प्रसिद्ध पुस्तक ''शिक्षण विचार'' में शिक्षा की वृहद् विशेषता बतातें हुए लिखा है कि छात्र को जैसे ही यह भाव हुआ कि मैं शिक्षा ग्रहण कर रहा हूँ, तो यह समझ लें कि शिक्षा का सारा मजा ही किरकिरा हो गया। छोटे बच्चों के लिए खेलना उत्तम व्यायाम कहा जाता है, इसका भी रहस्य यही है। खेलने में व्यायाम तो हो जाता है पर हम व्यायाम कर रहें है, ऐसा अनुभव नहीं होता। खेलते समय आसपास की दुनिया खत्म हो जाती है। बच्चे तद्रूप होकर अद्वैत का अनुभव करते हैं। देह की सुध–बुध नहीं रह जातीय भूख, प्यास, थकान, पीड़ा कुछ भी मालूम नहीं पड़ती। सारांश, खेल का अर्थ 'आनन्द' या 'मनोरंजन' रहता है। वह व्यायाम रूप 'कर्तव्य' नहीं बन पाता। यही बात सभी प्रकार की शिक्षाओं पर लागू करनी चाहिए।

शिक्षा के सिद्धान्त

''विचारों का प्रत्यक्ष जीवन से नाता छूट जाने से विचार निर्जीव हो जाते हैं और जीवन विचार शून्य बन जाता है। मनुष्य घर में जीता और विद्यालय में विचार सीखता है, इसलिए जीवन और विचार का मेल नहीं बैठता। इसका उपाय यह है कि एक ओर से घर में विद्यालय का प्रवेश होना चाहिए और दूसरी ओर से विद्यालय में घर चाहिए। समाज–शास्त्रियों को चाहिए कि शालीन कुटुम्ब का निर्माण करें और शिक्षा–शास्त्रियों को चाहिए कि कौटुम्बिक पाठशाला स्थापित करे।''

छात्रालय अथवा शिक्षकों के घर को शिक्षा की बुनियादी मानकर उस पर शिक्षण की इमारत रचने वाली शाला ही कौटुम्बिक शाला है। इस प्रकार शिक्षा के सिद्धान्त निम्नवत हैं–

1. ईश्वर निष्ठा संसार में सारवस्तु है। इसलिए नित्य के कार्यक्रम में दोनों समय सामुदायिक उपासना या प्रार्थना होनी चाहिए।
2. आहार–शुद्धि का चित्त शुद्धि से निकट संबन्ध है, इसलिए आहार सात्विक होना चाहिए। दूध और दूध से बने पदार्थों का मर्यादित उपयोग करना चाहिए।
3. ब्राह्मण से या दूसरे रसोइये से रसोई नही बनवानी चाहिए। रसोई की शिक्षा भी शिक्षा का अंग है।
4. कौटुम्बिक पाठशाला को अपने पारवाने का काम भी अपने हाथ में लेना चाहिए। अस्पृश्यता–निवारण का अर्थ किसी भी मनुष्य से छूआछूत न मानना ही नहीं है, किसी भी समाजोपयोगी काम से नफरत न करना भी है।
5. कौटुम्बिक पाठशाला में पंक्तिभेद रखना भी सम्भव नहीं । आहार शुद्धि का नियम रखना काफी है।
6. स्नानादि प्रातः कर्म सबेरे ही कर डालने का नियम होना चाहिए। स्नान ठंडे पानी से करना चाहिए।
7. सोने के पहले देह शुद्धि आवश्यक है। इस सायं कर्म का प्रगाढ़ निद्रा और ब्रह्मचर्य से सम्बन्ध है। खुली हवा में अलग–अलग सोने का नियम होना चाहिए।
8. किताबी शिक्षा के बजाय उद्योग पर ज्यादा जोर देना चाहिए। कम से कम तीन घंटे तो उद्योग में देने ही चाहियें। इसके बिना अध्ययन तेजस्वी नहीं हो सकता।
9. कातने को राष्ट्रीय धर्म तथा प्रार्थना की भांति नित्यकर्म में गिनना चाहिए। उसके लिए उद्योग के समय के अलावा कम से कम आधा घण्टा समय देना चाहिए। तकली पर कातना तो आना ही चाहिए।
10. कपड़ा में खादी ही बरतनी चाहिए। दूसरी चीजें भी जहाँ तक सम्भव हो, स्वदेशी ही लेनी चाहिए।
11. सेवा के सिवा दूसरे किसी भी काम के लिए रात को जागना नहीं चाहिये। नींद के लिए ढाई पहर रखने चाहिये।
12. रात को भोजन नहीं करना चाहिये। आरोग्य, व्यवस्था, और अहिंसा, तीनों दृष्टियों से इस नियम की आवश्यकता है।

शिक्षा के उद्देश्य

मनुष्य में सत्यवृत्ति उत्पन्न करना शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य है। जब मनुष्य का जीवन सत्य पर खड़ा रहेगा, तभी उसे आत्मा का दर्शन होगा। परमेश्वर तक पहुँचने का मार्ग सत्य से ही बना हुआ है। उस सत्य की खोज अनिवार्य है। विनोबा जी ने ज्ञान के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा कि ज्ञान के अर्थ है आत्मज्ञान, जो बुद्धिगत है। वह जब इन्द्रियों में उतरता है और जीवन में सामाहित हो जाता है, तो विज्ञान बन जाता है। ज्ञान को विज्ञान का रूप देने में पग–पग पर विवेक जागृत रखना अवाश्यक है। इसे विद्यार्थियों में उत्पन्न करना चाहिए। विनोबा जी ने आन्तरिक विकास पर जोर दिया और कहा कि आन्तारिक विकास से तात्पर्य उस विकास से है जो विद्याार्थियों को आन्तरिक रूप से यानि अंर्तमन से विकसित करते है। विनोबा जी के अनुसार विद्यार्थियों में स्वावलम्बन का निर्माण करना चाहिए। विद्या जीवन की एक मौलिक वस्तु है। स्वावलम्बन का तात्पर्य है–

1. अपने उदर निर्वाह के लिए दूसरों पर आधारित न रहना पड़े।

2. ज्ञान प्राप्त करने की स्वतंत्र शक्ति जाग्रत हो और मनुष्यों में अपने आप पर नियंत्रण रखने की शक्ति आनी चाहिए। स्वावलम्बन ही मुक्ति है।

विनोबा जी के अनुसार तालीम में ऐसा प्रयोग अपनाना चाहिए जिसमें विद्यार्थी की प्रजा स्वयंभू और स्वतंत्र विचारक बने। अगर विद्या में यही मुख्य दृष्टि रही तो विद्या का सम्पूर्ण स्वरूप ही बदल जायेगा। विनोबा जी ने कहा, यदि हम अपने देश को ठीक ढंग से बनायें। शांति की ताकत कायम करें तो अपना प्रभाव पूरे विश्व पर डाल सकते हैं। इसलिए विद्यार्थियों को तालीम इस प्रकार से दी जाये जिससे विद्यार्थियों के मन में विश्व नागरिकता का निर्माण हो सके। विनोबा जी के अनुसार प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी स्वंय की योग्यता एंव परिश्रम द्वारा जीविकोपार्जन में समर्थ होना चाहिए यदि वह ऐसा नही कर सकता तो समाज के लिए अभिशाप सिद्ध होगा। अतः शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य प्रत्येक छात्र को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाना है। किसी भी छात्र को पन्द्रह वर्ष की अवस्था के बाद अध्यापक की सहायता पर निर्भर रहना अयोग्यता की बात होगी।

विनोबा वर्तमान शिक्षा से असंतुष्ट रहे हैं। उन्होंनें कहा– जो तालीम उस वक्त चलती थी। वही तालीम आज भी चल रही है। अगर उसमें और आज की तालीम में कुछ फर्क होगा तो यही होगा कि आज की तालीम कुछ कमजोर होगी। बच्चों का स्तर गिरा हुआ होगा।

शिक्षा का पाठ्यक्रम

विनोबा जी ने पाठय्क्रम की समग्रता को बुनियादी तालीम, भौतिक शिक्षा, वर्क ओरियन्टेड शिक्षा जैसे शब्दों के समानान्तर त्रिसूत्री शिक्षण शब्द का प्रयोग किया

तथा इनका योग, उद्योग तथा सहयोग के तीन सूत्रों में बाँधा और त्रिसूत्री शिक्षण के रूप में स्वीकार किया है।

विनोबा ने पाठ्यक्रम के स्रोतों को ऋग्वेद से लिया है। चार वेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण निरूक्ति ज्योतिष के आधार पर विनोबा ने पाठ्यक्रम का स्वरूप इस प्रकार प्रस्तुत किया है।

1. शारीरिक (शिक्षा)–रसोई तैयार करना, सफाई शास्त्र, पीसना, पानी भरना, अन्य व्यायाम, आरोग्य शास्त्र आदि।
2. औद्योगिक (कल्प)–बुनाई, खेती, बढ़ईगिरि, सिलाई का काम आदि।
3. भाषिक (व्याकरण)–संस्कृत, हिन्दुस्तानी, स्वभाषा, परभाषा।
4. सामाजिक (निरूक्त)–राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास आदि।
5. कलात्मक (छंदस)–संगीत, चित्रकला आदि।
6. व्यावहारिक (ज्योतिष)–गणित (अंक, बीज, रेखा), जमा खर्च, भूगोल, भौतिक विज्ञान आदि।

शिक्षण विधियाँ

विनोबा जी ने सहज शिक्षण पर बल दिया। सहज रूप से जो सिखाया जाता है, वह स्थायी होता है। इस प्रश्न पर विचार करते हुए वे कहते हैं– मीडियम ऑफ नॉलेज, कर्म ही हो सकता है। बच्चे को माँ ज्ञान देती है, तो कर्म के माध्यम से ही देती है। क्रिया का रूपातंर शब्दों में करके ही बताती है। ज्ञान की प्रकिया में आदि में कर्म होता है। मध्य में कर्म होता है और अन्त में उसकी परिणति ज्ञान के रूप में होती है। नई तालीम की प्रकिया से यह संभव हो सकती है।

मिट्टी और घड़े के सम्बन्ध को 'समवाय' कहते हैं। बच्चों के सारे शिक्षण कर रचना किसी एक मूल–उद्योग पर खडी की जाये। उद्योग से शिक्षण को गरमाहट मिले और शिक्षण से उद्योग पर प्रकाश डाला जाये। इसका नाम है, 'समवाय–पद्धति'।

विनोबा जी ने अखण्ड ज्ञान प्राप्त करने का सूत्र बताया ''विद्याार्थियों को प्रसंग के अनुसार पाठ पढ़ाना चाहिए यदि बच्चा आलस्य करें तो उसे उत्साह के श्लोक सिखाना चाहिए, यदि वह डरे तो निडरता का पाठ पढ़ाना चाहिए। उदाहरणार्थ एक बच्चा सूत धीरे–धीरे कातता है परन्तु सूत टूटता नही, दूसरा जल्दी–जल्दी कातता है परन्तू टूटता है तो उस समय वहाँ कछुआ और खरगोश की कहानी सुनानी चाहिए, ताकि उन्हें अखण्डता का सही ज्ञान प्राप्त हो।

विनोबा जी ने छोटे बच्चों के विषय के निर्धारण करते समय सुझाव दिया कि छोटे बच्चों को एक ही विषय का शिक्षण देने से काम नहीं चलेगा। साथ ही उन पर अनेक विषयों का बोझ लादना भी व्यर्थ है। उनके लिए एक ही विषय रखना चाहिए जीवन विकास उसके तीन अंक हैं। **वाणी, शरीर और मन**।

(अ) वाणी के लिए–अच्छे भजन, कविता आदि मधुर कंठ से और स्वच्छ उच्चारण से पढ़वाना।

(ब) शरीर के लिए–खुली हवा में उद्योग, अदल–बदल कर दिन भर कुछ न कुछ काम करवाना।

(स) मन के लिए– व्यवहार वर्ताब कैसा हो? सबके लिए उपयोगी कैसे बने? हम शरीर से भिन्न हैं इसका ज्ञान करवाना।

शिक्षक

विनोबा स्वयं शिक्षक थे। शिक्षक का काम पंथ संशोधक का होता है। वह जीवन की राह दिखाता है। जीवन की राह बनाता है। विनोबा ने मुख्य रूप से जीवन भर शिक्षक का कार्य किया है। उन्होनें कहा कि शिक्षको में कम से कम तीन गुणों की आवश्यकता रहती है। एक गुण यह हैं कि विद्यार्थियों पर उनका प्रेम होना चाहिए। शिक्षक का दूसरा बड़ा गुण यह है कि उसे निरन्तर अध्ययनशील होना चाहिए। गुरू में एक तीसरा गुण भी होना चाहिए। उन्हें समझना चाहिए कि शिक्षकों का बहुत बड़ा अधिकार है। इसलिए वे सब राजनीति से मुक्त रहें। अगर शिक्षक राजनीति में पड़े हुए हैं, तो समझना चाहिए कि वे कर्ता नहीं कर्म हैं। उनके हाथ में कर्तव्य नहीं है। शिक्षक की महत्ता का वर्णन करते हुए विनोबा कहते हैं– ''प्राचीन काल से आज तक जो भारत बना उसे शिक्षकों ने ही बनाया है। उस दरम्यान राजसत्ताएं तो अनेक आईं और गईं परन्तु राजसत्ता ने भारत को नहीं बनाया, भारत को बनाया, यहाँ के संत, फकीर और आचार्यों ने।''

विनोबा ने आचार्य के तीन लक्षण बताये हैं।

1. शीलवान 2. प्रज्ञावान 3. करूणावान। इन लक्षणों की वयाख्या करते हुए विनोबा कहते हैं। शीलवान साधु होता है। प्रज्ञावान ज्ञानी होता है। करूणावान माँ होती है। लेकिन आचार्य साधू, ज्ञानी तथा माँ तीनों होता है।

विद्यार्थी विनोबा जी के अनुसार विद्यार्थी स्वंय ही सीखता है। हमें विद्यार्थियों में ज्ञान भरना नहीं ँ, हमें उनमें ज्ञान की पियास उत्पन्न करनी हैं। ज्ञान को प्राप्त करने की शक्ति पैदा करनी है। युनिवर्सिटी में रहकर विद्यार्थी कुछ ज्ञान कमाते हैं और समझते हैं कि यह ज्ञान अपने भावी जीवन में लाभ पहुँचायेगा। वास्तव में जहाँ युनिवर्सिटी का ज्ञान खत्म होता है। वहाँ विद्या का आरम्भ होता है। युनिवर्सिटी का अध्ययन पूरा करने का अर्थ इतना ही है कि अब आप अपने प्रयत्न से विद्या

प्राप्त कर सकते हैं। आप निजाधार बनें, निराधार नहीं रहें। विद्यार्थी का पहला कर्तव्य है कि वे अपना दिमाग अत्यन्त स्वतंत्र रखें। बिना श्रद्धा के विद्या नही मिलती। इसलिए श्रद्धा रखनी चाहिये,पर श्रद्धा के साथ–साथ बौद्धिक स्वातंत्रय की भी उतनी ही आवश्यकता है। विद्यार्थी का दूसरा कर्तव्य है कि वे अपने पर काबू पायें। स्वतंत्रता का अधिकार वही अपने हाथ में रख सकेगा जो अपने ऊपर काबू पा सकेगा। विद्यार्थी का तीसरा कर्तव्य है कि वे निरन्तर सेवा–परायण रहें। बिना सेवा के ज्ञान–प्राप्ति नहीं होती। विद्यार्थियों का चौथा कर्तव्य है कि उन्हें सर्व–सावधान होना चाहिए। उन्हें सोचना चाहिए कि हम विश्व–मानव है, हम विद्या के उपासक हैं, तटस्थ बुद्धि से सोचने वाले हैं, और हम संकुचित पथिक नहीं बन सकते। सारांश यह कि गम्भीर अध्ययन का सूत्र है–'अल्पमात्रा, सातत्य, समाधि, कर्मावकाश और निश्चित दिशा।'

अनुशासन

अनुशासन शिक्षा का अनिवार्य पक्ष है। वह शिक्षा ही क्या जो व्यक्ति को अनुशासित न करे। विनोबा स्वयं अनुशासन प्रिय थे। अनुशासन प्रिय होने का यह अर्थ नहीं कि वे गंभीर थे या गंभीरता का आवरण ओढ़े रहते थे। वे तो अनुशासन में रहते थे। अनुशासन के साथ जुड़ी है–अनुशासन हीनता। ज्ञान प्राप्ति का अभाव ही अनुशासन–हीनता का कारण है। अनुशासन निर्माण में आचार्यों की भूमिका महत्वपूर्ण है। विनोबा जी के अनुसार अनुशासन के लिए आवश्यक है, विचार शून्यता। इसी का नाम आत्म–चिन्तन है। गुण का विकास अनुशासन की उपलब्धि है। अनुशासन का विकास व्यक्ति का विकास है। अनुशासन का आरम्भ आचार्य से होता है। आचार्य अनुशासन में रहेंगे तो शिष्य भी रहेंगे। विद्यार्थी तथा अध्यापक के मध्य विकसित होने वाला यह सम्बन्ध पारस्परिक है। एक दूसरे को पूर्णता प्रदान करता है। अनुशासन के लिए विवेक को महत्वपूर्ण बताते हुए विनोबा जी कहते हैं कि विवेक का विकास होना ही अनुशासन है।

विद्यालयी शिक्षा

गरीब और अमीर दोनों का एक ही विद्यालय होना चाहिए जैसे–कृष्णा था एक महान राजपुत्र। सुदामा अत्यन्त गरीब ब्राह्मण था। दोनों को एक ही क्लास में रखा। यह नहीं कि अमीर के लिए पब्लिक स्कूल और गरीब के लिए दूसरा स्कूल। इन दिनों ऐसा होता है, कि कुछ लोगों के लिए 'पब्लिक स्कूल' होता है, 'पब्लिक स्कूल' वह जहां 'पब्लिक' नहीं जा सकती। वैसा भेद तो उस गुरू ने किया नहीं और दोनों को शरीर–श्रम का बराबर का काम दिया। दोनों ने यह काम अच्छी तरह किया और दोनों को गुरू ने छः महीने में सर्टिफिकेट दे दिया।

प्राथमिक शिक्षा के बाद उच्च शिक्षा के बारे में विनोबा जी ने सुझाव दिया कि बच्चे छः घण्टे मेहनत करके शरीर–श्रम से रोटी कमायें और दो घंटे उसके परिपोषक ज्ञान–विज्ञान की उन्हें शिक्षा दी जाये। बच्चों पर खर्च न तो पाठशाला करे और न माता–पिता ही। फिर वे बच्चे चाहे गरीब के हों, चाहे अमीर के। ऐसा करने से ही सच्चा प्रयोग होगा और देश आगे बढ़ेगा।

विनोबा जी ने सुझाव दिया कि 'सोलह वर्ष तक स्वावलम्बन की शिक्षा और सोलह वर्ष के बाद स्वावलम्बन से शिक्षा'–यह सूत्र स्वीकार कर तदनुसार शिक्षा योजना बनानी चाहिए।

नारी शिक्षा–विनोबा ने सामाजिक क्रान्ति के लिए नारी का आह्वान किया है। सभी राजनीति, सेना तथा धर्म (सम्प्रदाय) से मुक्त होकर ब्रह्म विद्या के आधार पर क्रान्ति का बिगुल बजा सकती है। विनोबा का ब्रह्म विद्या मन्दिर का प्रयोग अधिक प्रासंगिक सिद्ध हुआ है। इसीलिए पूर्व बुनियादी (प्राथमिक) शिक्षा का भार विनोबा ने स्त्रियों को सम्भालने के लिए कहा है। नारी सर्वोत्तम शिक्षिका है, उसके मुख से जो वाणी निकलती है, वह संस्कार पैदा करती हैं, इसलिए नारी शिक्षा को विनोबा जी ने प्राथमिकता दी है। ब्रह्मविद्या मन्दिर वह दीपक है जिसे, तिपाई पर टांगा जाना चाहिए, जिससे उसका प्रकाश सभी को मिलता रहे। उत्तम अध्ययन हो, ज्ञान–प्रदेश में महिलाओं का पवित्र प्रवेश समाज के मार्गदर्शन हेतु मौलिक चिन्तन हो, स्त्रियों को अध्यात्मज्ञान पहले दिया जाये। तालीम का सारा आधार आत्मा का ज्ञान हो। स्त्री शिक्षण में सत्य–निष्ठा और तपस्या की सख्त जरूरत है। ताकि स्त्री में मौजूदा समाज के खिलाफ बगावत करने की हिम्मत आये। जिसके अन्दर अध्यात्म विद्या है, उसे सारी दुनिया भी नहीं दबा सकती है। इस प्रकार 'मातृहस्तेन भोजनम्' और 'मातृमुखेन शिक्षणम्' होगा तो भारत की प्रभा एकदम फैलेगी और दुनिया पर उसका असर पड़ेगा।

आज वर्तमान समय में आचार्य विनोबा भावे के शैक्षिक विचारों का प्रयोग करना समाजोत्थान की दृष्टि से अधिक प्रासंगिक है ऐसा शोधार्थी का विश्वास है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची

1- विनोबा भावे, 'शिक्षण विचार' (2010) सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी ISBN&978–81–909437–6–5
2. विनोबा, 'विनोबा साहित्य' परम धाम प्रकाशन, पवनार, वर्धा।
3. विनोबा, 'सर्वोदय जगत' 1.15 सितम्बर (2014) सर्व सेवा संघ परिसर. राजघाट वाराणसी (उ0प्र0)
4. विनोबा, 'मनोयुक्ति, ब्रह्म विद्या मन्दिर, परमधाम प्रकाशन, पवनार, वर्धा
5- शास्त्री, आचार्य चन्द्र शेखर ''आचार्य विनोबा : शिक्षा–सार ''(2006) साहित्य सुरभि, 1/9427, वैस्ट रोहतास नगर शाहदरा दिल्ली–110032 ISBN 81–88 066–052